जय बद्रीनाथ विश्वम्भरम्

श्रीश्रीमाँ सर्वाणी

वैकुंठाधिपति भगवान नारायण बद्रीनाथधाम में या बदरिकाश्रम में 'बद्रीनाथ अथवा बद्रीनारायण' रूप में पूजित होते हैं। प्राचीनकाल में हिमालय पर्वतोपरि बद्रीनाथधाम बदरी फलों के वृक्षों से परिपूर्ण था। उस स्थल पर बहुत ऋषि-मुनियों और देवगणों ने तपोरत होकर वैकुंठाधिपति नारायण के दर्शन प्राप्ति से मोक्षमूलक वर प्राप्त किए थे। इन समस्त देवगणों एवं ऋषि-मुनियों के प्रार्थना से संतुष्ट होकर भगवान श्रीहरि ''चिरकाल तक बदरिकाश्रम में स्थायी रूप से निवास करेंगे'' ऐसा कहकर उन सबके समक्ष प्रतिज्ञाबद्ध हुए थे। इसके फलस्वरूप प्राचीन युग से आजतक भगवान नारायण का माहात्म्य बद्रीनाथधाम में प्रकटित होते आ रहा है। बदरिकाश्रम में बदरी वृक्ष के तले आविर्भूत होकर भगवान पुरुषोत्तम श्रीहरि नारायण सनातन धर्म-रक्षार्थ समय-समय पर पराशास्त्रादि सभी विषयों का ऋषि-मुनिगण को उपदेश प्रदान करते हैं इसलिए उनका नाम 'बद्रीनाथ' हुआ है। बद्रीनाथ या बदरी-नाथ नाम माहात्म्य में 'बदर' शब्द का अर्थ है पूर्णचन्द्र; अर्थात् पूर्णचन्द्रमा के सदृश ईश्वर हैं जो, वह ही हैं बद्रीनाथ पुरुषोत्तम स्वयं – पूर्णब्रह्म सनातन श्रीकृष्ण का शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी चतुर्भूज श्रीहरि रूप।

पुराण में कथित है कि कलिकाल समागत होने से जब वेद, शास्त्रादि सारे विलुप्त हो जाऐंगे; तब सात्वतपति भगवान श्रीहरि बदरिका तीर्थ में विराजमान व प्रकटित रहकर सनातन शाश्वत विद्या की रक्षा करेंगे। यह बदरिकाश्रम-तीर्थ सर्वार्थ-साधन और मुक्तिकामीगण के लिए सर्वसिद्धिप्रद सिद्धक्षेत्र कहकर परिगण्य है। इस कारण जगत् के ऋषि संघ इस स्थल पर ही सम्मिलित होकर मुक्तिमार्ग की साधना में नियत निरत रहते हुए जगत्कल्याण कर्म में नियुक्त रहते है। श्रीहरि का क्षेत्र यह बदरिकातीर्थ त्रिलोक के मध्य सुदुर्लभ है। पुराकाल में साधुगण में प्रीति उत्पन्न करने के लिए रम्य कैलाश शिखर पर ऋषिगण के समक्ष कार्तिकेय को पार्वतीपति महादेव ने इसप्रकार कहा था कि ''अन्यान्य तीर्थ में परम कष्टसाध्य तपस्या करने से जो फल लाभ होता है, इस बदरीतीर्थ में बद्रीनाथ विशाल की पूजार्चना करने मात्र से ही, नर मुक्तिभागी होता है। भगवान नारायण युगयुगान्त भेद हेतु कभी-कभी अन्य सारे तीर्थों का परित्याग करते हैं परंतु इस बदरी तीर्थ का कदापि परित्याग नहीं करते हैं। इस क्षेत्र में निखिल तीर्थ, देवता व ऋषिगण निवास करते है इसलिए यह तीर्थ 'विशाला' नाम से प्रसिद्ध है।

बदरीतीर्थ के अनन्य गुण माहात्म्य देवादिदेव शंकर पुत्र कार्तिकेय के निकट व्यक्त करने से तब कार्तिकेय (स्कन्द) ने पिता के निकट बदरीतीर्थ की उद्‌भव कथा श्रवण करने के लिए आग्रह किया। इससे भगवान शिव कहने लगे – पूर्वकाल में सत्ययुग के प्रारंभ में एकबार परमपिता महाप्रजापति ब्रह्मा के स्वीय तनुजा को असामान्य रूपयौवन सम्पन्ना देखकर कामशर से जर्जरित होकर उसके प्रति कुमनोभाव पूर्वक धावित होने पर शिव ने ब्रह्मा के ऐसे असभ्य व दूर्व्यवहार को देखकर क्रुद्ध होते हुए खड्ग द्वारा ब्रह्मा का शिरच्छेदन किया था। ब्रह्मा का शिरच्छेदन करने के पश्चात् कपालरूपिणी ब्रह्महत्या का स्वरूप आकर शिव का आश्रय करने से वे सत्वर उस ब्रह्मकपाल को कर में लेकर तीर्थसेवा के लिए वहिर्गत हो गऐ; किन्तु ब्रह्महत्या ने उनका परित्याग नहीं किया। पूर्ववत् कपाल उनके हस्त में ही रह जाने से तब शिव, श्रीहरि के दर्शनार्थ वैकुंठ में गमन करके तत्सान्निध्य में सविनय पूर्वक अवनत होकर उस करूणात्मा के निकट सारा वृत्तान्त ज्ञापित किया। इससे भगवान श्रीहरि ने शिव को बदरी दर्शन करने का उपदेश प्रदान किया एवं शिवजी उनके उपदेशानुसार बदरी तीर्थ पर उपस्थित हुए। शिव के बदरीतीर्थ पर उपस्थित होने मात्र से ही ब्रह्महत्या ने शिव का परित्याग किया एवं कम्पित कलेवर में अन्तर्हित हो गयी। इसी समय से ही शिव पार्वती-सह सादर इस बदरी क्षेत्र में निवास करते हुए ऋषिगणों की प्रीति संवर्धन करते हुए वहाँ

तप कर रहे हैं। वाराणसी, श्रीशैल एवं कैलास में शिवा के साथ निवास करने से शिव की जैसी प्रीति होती हैं, बदरीतीर्थ-निवास से उनकी तदपेक्षा अनन्तगुणा अधिक प्रीति होती है। इस क्षेत्र में श्रीहरि के चरण सन्निधान स्वयं वैश्वानर अग्नि विराजित हैं। इस वैश्वानर के समीप केदार रूपी सदाशिव का लिंग प्रतिष्ठित है। वाराणसी में देहावसान होने से मानवगण की जो मुक्ति होती है उसका नाम 'ब्रह्ममुक्ति' है; शिव की इस बदरी सन्निहित केदार-लिंग के पूजन से ही मानवगण को तादृश मुक्ति प्राप्त होती है।

हर के मुख से इस तरह बदरीतीर्थ व केदार लिंग माहात्म्य श्रवण कर तब भगवान स्कन्द ने जानना चाहा कि वैश्वानर अग्निदेव ने किस लिए बदरीवन में अवस्थान किया? इस पर शिव ने उत्तर दिया कि एकबार अग्निदेव बदरी क्षेत्र में उपनीत होकर ऋषिमुनिगण के सम्मुख उपवेशन पूर्वक विनयावनत मस्तक से निवेदन किया –''निरंतर शास्त्र का दर्शन करके आप सब की दृष्टि एकमात्र ज्ञानयोग में ही युक्त रही है, आप सब ब्रह्मवेत्ता हैं। दीनों के लिए आप सब का करुणापूर्ण हृदय दयाद्र रहता है, अशेष पापपुंज में मेरा चित्त लिप्त है; अब नरक से किस प्रकार से मेरी मुक्ति होगी?'' अनन्तर उन सभी प्रधान-प्रधान ऋषि-मुनिगणों के मध्य से गंगाजलाप्लुत देह मुनिवर व्यासदेव ने वैश्वानर को कहा –''हे वैश्वानर। आप के पाप की निष्कृति का एक परम उपाय यही है कि आप बदरी की शरण ग्रहण करिए; यह करने से आप का सर्वभक्ष नामक दोष का उपशम होगा। आप बदरी तीर्थ में गमन पूर्वक जाह्नवी जल में स्नान करके श्रीहरि की प्रदक्षिणा कर उनके चरण में प्रणिपात करें। ऐसा करने से ही आप का पापक्षय हो जाएगा।'' तदनन्तर वैश्वानर ने बदरिकाश्रम में उपनीत हो कर गंगा में स्नान करके नारायणाश्रम में गमनपूर्वक भक्तिभाव से श्रीहरि को नति-स्तुति करते हुए पूजार्चना करने से भगवान नारायण के उसके प्रति सन्तुष्ट होकर वर प्रदान करने की इच्छा होने से अग्नि ने कहा –''हे विभो! यदि मैं सर्वभक्ष्य ही हो गया तो मेरी निष्कृति कैसे होगी? इस कारण मुझे अत्यन्त भीति हो रही है।'' यह श्रवण कर भगवान ने कहा, ''मेरे इस क्षेत्र का दर्शन मात्र से ही प्राणीगण का पाप विनष्ट होता है। अतएव मेरे अनुग्रह हेतु कदापि पाप तुम को स्पर्श नहीं करेगा।'' बद्रीनाथधाम में जहाँ अग्नि ने तप किया था वह स्थल 'अग्नितीर्थ' नाम से परिचित हुआ।

अग्नितीर्थ की उद्‌भव कथा श्रवण करते हुए स्कन्द ने शिव से कहा, ''हे पितः! आप अखिल प्राणियों के हृदय में विराजते हैं एवं सर्व शास्त्रों में विशारद हैं। कृपा पूर्वक मुझ से अग्नितीर्थ का माहात्म्य वर्णन कीजिए।''

भगवान शिव ने कहा, ''हे तात, यह समझो कि निखिल तीर्थ ही अग्नितीर्थ की सेवा करता है। यह अतीव गुह्य विषय है। अत्यन्त मलयुक्त स्वर्ण जिस प्रकार अग्नि संयोग से विशुद्धि प्राप्त करता है तद्रूप देही अग्नितीर्थ में आते ही सर्वपाप-मुक्त हो जाते है। अन्यान्य तीर्थ में स्नान, दान, जप, हवन संध्या एवं देव-पूजा करने से जो पुण्यफल लब्ध होता है, इस तीर्थ में वे समस्त कृत होने से इस से भी अनन्तगुणा अधिक फललाभ होता है। इस विश्व में बहु श्रेष्ठ पूत तीर्थ है, परन्तु वह्नितीर्थ के तुल्य कोई तीर्थ नहीं है और होगा भी नहीं। ब्रह्मा, शिव, शेषनाग, देव एवं ऋषिगण कोई भी वह्नितीर्थ का फल कहने में समर्थ नहीं है। जो नर वह्नितीर्थ में उपवास द्वारा प्राणजित् होकर जनार्दन की पूजा करते है वह अनलतुल्य हो जाते है। इस स्थल में शिला-पंचक के मध्य नित्य ही हरि का सान्निध्य है एवं वहाँ सर्वपाप प्रणाशन पूत पावक तीर्थ अवस्थित है।'' यह सुनकर स्कन्द ने जिज्ञासा किया, ''हे पितः! ये 'शिला-पंचक' क्या है? एवं किस के द्वारा प्रतिष्ठित हुए है, यह मुझे बताईए।'' तब शिव ने कहा,''शिला-पंचक के नाम श्रवण करो; नारदी, नारसिंही, वाराही, गारुड़ी एवं मार्कण्डेयी – ये विख्यात पंचशिला है एवं ये सर्वाभीष्टप्रद है। मुनिसत्तम नारद ने महाविष्णु के दर्शन मानस में वायु भोजी व फलाहारी होकर इस शिला पर छः सहस्र वर्षो तक दुष्कर तपस्या की थी। तब भगवान श्रीहरि मुनि की तपस्या से सन्तुष्ट होकर ब्राह्मण के वेश में उनके समीप उपनीत हुए थे एवं उसके तप करने के कारण से अवगत होकर निज स्वरूप का दर्शनदान पूर्वक उसको वर

नारद मुनि

प्रदान किया था। नारद ने कहा, ''हे जनार्दन! आप का दर्शनलाभ किया हूँ; अतएव मेरा जीवन, तपस्या एवं ज्ञान आज सब ही धन्य हो गया।'' स्तव श्रवणकर भगवान ने कहा, ''हे नारद! तुम्हारी तपस्या एवं स्तव से मैं प्रसन्न हुआ हूँ। त्रिलोक मध्य तुम्हारे जैसा श्रेष्ठ भक्त और मेरा द्वितीय कोई नहीं है। तुम्हारी मंगल कामना करता हूँ, मैं तुम्हें वरदान देने के लिए समागत हुआ हूँ, अतएव वर की प्रार्थना करो। हे नारद! मेरे दर्शन से तुम्हारे सर्वाभीष्ट सिद्ध हो गये है।'' इस पर नारद ने कहा, ''हे देव! यदि आप मुझे वरदान देने के लिए ही आए हैं और यदि मैं वर ग्रहण करने का उपयुक्त पात्र हूँ तो आपके श्रीपादपद्मों पर मेरी अविचल भक्ति प्रदान कीजिए। द्वितीयत:, आप कदापि मेरी शिला का सान्निध्य परित्याग न करे एवं तृतीयत:, मेरे तपोस्थल इस तीर्थ के दर्शन मात्र से ही मानवगण की मुक्ति हो सके।'' भगवान ने कहा, ''नारद, वह ही होगा। तुम्हारे स्नेह-प्रीति के कारण मैं इस तीर्थ में निवास करूँगा। चराचर समस्त जीवगोष्ठी ही इस तीर्थ के दर्शन से मुक्तिलाभ करेंगे, इस में कोई संशय नहीं है।'' अनन्तर श्रीहरि इसप्रकार कहकर अन्तर्धान हो जाते है। तत्पश्चात् नारद भी उस बदरी कानन में कुछ दिन वास करके मधुपूर चले गए।

तदनन्तर स्कन्द ने शिव के निकट मार्कण्डेय शिला के माहात्म्य को श्रवण करना चाहा। शिव ने कहा, ''पुराकाल में त्रेता युगावसान के समय महान मृकंडुनंदन मार्कण्डेय ने स्वीय आयु अल्प है ऐसा जानकर परम मंत्र का जप किया था। वे द्वादश अक्षर मंत्र में अव्यय हरि की पूजा करके सप्तकल्प व्यापी आयुलाभ करते हुए वहाँ से चले गए। तत्पश्चात् उन्होंने तीर्थपर्यटन में श्रम के विषय की आलोचना करते हुए मथुरा गमन किया था एवं वहाँ नारदजी का दर्शनलाभ करते हुए उस मुनिसत्तम की पूजा वंदनादि की थी। उसी समय नारद मथुरा में अवस्थानपूर्वक श्रीहरि के आवासस्थल बदरीतीर्थ की महिमा का कीर्तन कर रहे थे। उन्होंने मार्कण्डेय को देखकर उन्हें बदरीक्षेत्र के माहात्म्य एवं उसी स्थलपर श्रीहरि के नित्य विद्यमानता के विषय में ज्ञापित करवाया। नारद के उपदेशानुसार मार्कण्डेय के विशाल बदरीक्षेत्र में जाकर स्नात होकर शिला पर बैठ कर अष्टाक्षर परम मंत्र का त्रिदिवस व्यापी जप एवं ध्यान करने से भगवान प्रसन्न होकर मार्कण्डेय के निकट उपनीत हुए। भगवान का दर्शन करके मार्कण्डेय स्तव-स्तुति करने लगे। मार्कण्डेय ने कहा, ''हे दीन वत्सल! यदि आप की मेरे प्रति प्रीति हैं तो हे भगवन्! जिस प्रकार से मैं आप की पूजा व दर्शन कर सकूँ, मुझे उसी प्रकार की भक्ति प्रदान कीजिए। मेरी इस शिला पर आप का सान्निध्य हो, अब यही मेरा अभीष्ट वर है।'' भगवान महाविष्णु तब ''वह ही होगा'' कहकर अंतर्हित हो गये। मुनि मार्कण्डेय ने भी तब तदीय पिता के आश्रम में गमन किया।''

इसके पश्चात् स्कन्द ने पिता से ''गारुड़ी शिला'' की माहात्म्य कथा सुनने की इच्छा व्यक्त की। शिव ने कहा, ''कश्यप के औरस में एवं विनता के गर्भ से महाबली एवं पराक्रमी, अरुण और गरुड़ नामक दो तनयों ने जन्मग्रहण किया; तन्मध्य अरुण सूर्य देव के सारथि बने थे एवं गरुड़ ने ''श्रीहरि का वाहन बनूँगा'' इसरूप कामना करते हुए बदरी के दक्षिण भाग में गंधमादन शृंग पर सम्यक रूप से तपस्या की थी। फलमूल जलाहारी हो कर एक पद भूतल पर रखकर बिनाक्लेश के जप-तप करके गरुड़ के हरि के दर्शन लालसा में तिनशत सहस्र वत्सर अतिक्रांत करने के पश्चात्, भगवान, गरुड़ के सम्मुख आविर्भूत हुए। भगवान हरि को देखकर गरुड़ का पुलक से सर्वांग पूर्ण हो गया एवं तब वे अंजलिबद्ध होकर हरि का स्तव करने लगे। अनन्तर महात्मा गरुड़ ने स्तवपूर्वक हरि की पूजा करने के लिए त्रिपथगा गंगा का वहाँ आह्वान किया। उसके आवाहन से गंगा पंचमुखी होकर उस शैल शिखर पर आविर्भूत हुई। तब गरुड़ ने उस पूत जाह्नवी जल से हरि को पाद्य और अर्घ्य प्रदान किया। इस से प्रसन्न होकर हरि ने उनको वर प्रदान करना चाहा तो गरुड़जी बोले, ''मैं आप के अनुग्रह से श्रीमान, बलशाली एवं पराक्रमशाली होकर देव व दैत्यगण से अजेय होकर एकमात्र आप का वाहन होने की अभिलाषा करता हूँ। अब मैंने जिस शिला पर बैठकर तप किया, यह शिला मेरे नाम से ही ख्यातिलाभ करे एवं जो समस्त व्यक्तिगण इस शिला की शरण लेंगे उनसब को विषव्याधि न होने पाये, यह भी मेरा अभीष्ट है ऐसा जानेंगे।'' गरुड़ की बातें सुनकर श्रीहरि, ''वह ही होगा'' कहकर गरुड़ की प्रार्थना को अंगीकार कर इसप्रकार कहा, ''हे गरुड़! सम्प्रति नारद बदरी वन में सेवारत हैं। तुम्हारे वहाँ चलकर शुचि होकर नारदतीर्थ में स्नान कर उपवासत्रय एवं मेरा दर्शनलाभ करने से ही मैं तुम्हारे लिए सुलभ हो जाऊँगा। इसतरह कहकर श्रीहरि वहाँ से विद्युत्गति से

अंतर्हित हो गए। गरुड़ भी तब बदरीधाम में जाकर वह्नितीर्थ मे अवस्थान कर शिला पर आश्रय ग्रहण कर व्रताचरण करने लगे। तत्पश्चात् नारदतीर्थ में अवस्थित हरि का दर्शनलाभ कर गरुड़ उनको यथाविधि नमस्कार पूर्वक तदीय आदेशानुसार स्वीय पूर में प्रस्थान किया।'' शिव ने कहा, ''हे स्कन्द, तदवधि वह शिला त्रिलोक में 'गारुड़ी शिला' नाम से प्रसिद्ध है।

'गारुड़ी शिला' के उपाख्यान सुनकर स्कन्द ने पिता को कहा, ''हे पित:! आप ईश्वर के भी ईश्वर हैं। अब मेरे निकट वाराही शिला के माहात्म्य का कीर्तन कीजिए।'' शिव ने कहा, ''श्रीहरि वराह रूप में सुरवैरी हिरण्याक्ष को युद्ध में निहत कर एवं रसातलगता वसुंधरा देवी का उद्धार करके बदरी वन में आ गए। बदरीक्षेत्र की सुन्दरता वृद्धि की कामना से सुरश्रेष्ठ हरि कल्पान्त काल योगधारणा में आसनासीन रहकर इस क्षेत्र में ही स्वीय आत्मा की प्रतिष्ठा करते हैं। हे स्कन्द! वहाँ श्रीहरि ने शिला के रूप में स्वयं को स्थापित किया था। जो मानव इस बदरी तीर्थ में गमन कर पूत गंगा में स्नान कर समाहित शान्त चित्त में अहोरात्र वहाँ निवास करते हुए एकाग्रचित्त होकर जप-ध्यान आराधनादि सम्पन्न करते है, उनको शिला मध्य ही श्रीहरि का देवदर्शन हो जाता है। साधक इस स्थल पर जो कुछ भी प्रार्थना करता है, सुदुष्कर होने से भी अचिरकाल में वह सिद्ध हो जाता है।'' स्कन्द ने कहा, ''हे प्रभो! आपके अनुग्रह से मैंने विविध दुर्लभ कथाएं श्रवण की है। अब बदरीक्षेत्र की 'नारसिंही शिला' माहात्म्य का कीर्तन करिए।'' स्कन्द के अनुरोध पर शिव ने कहा, ''क्रोधानल से प्रदीप्तांग हरि ने प्रलयानल तुल्य होकर लीला सहकार नखाग्र द्वारा हिरण्यकश्यप का वध किया। उस समय दयालु देवगणों ने अनतिदूर में विद्यमान रहकर लीला विग्रहधारी श्रीहरि की स्तव-स्तुति की थी। इससे भगवान ने तुष्ट होकर देवगणों को कहा था, ''आप सब वर प्रार्थना करिए।'' तब सुरगण के अधीश्वर स्वयंभू चतुरानन का मुखमंडल ईषत् हास्य से शोभित हुआ एवं वे कहने लगे, ''हे नरसिंह! आपका उग्ररूप अखिल प्राणियों के लिए भयंकर है; अतएव इस रूप का परित्याग करिए। आप स्वीय दिव्य मूर्ति को यथाविधि अनेकधा विभक्त कर शैलादि में स्थापना पूर्वक हमसब की भीति दूर करिए।'' हरि ने उत्तर दिया, ''मैं आपसब से प्रसन्न हूँ। अब कहिए, आप के लिए क्या प्रिय कार्य करूँ?'' सुरगणों ने कहा, ''हे विश्वमूर्ते! आप की इस मूर्ति को देखकर हमसब ही संक्षुब्ध हो रहे हैं। अतएव आप हमसब के अन्तर में सुखदायक प्रशान्त चतुर्भूज मूर्ति धारण कीजिए।'' यह सुनकर श्रीहरि विश्व के ऊपर दिव्यदृष्टि निक्षेप पूर्वक विशाला गमन करते हैं एवं वहाँ निविष्ट चित्त से जाह्नवी जल में क्रीड़ा करते-करते देवगण के प्रति अभय वाणी कहने लगे। तत्पश्चात् देवगण हरि को जल मध्यस्थित देखकर निर्भय हुऐ एवं स्व-स्व पूर में चले गए। देवगणों के चले जाने के बाद तपोधन ऋषिगणों का आगमन हुआ एवं वे नृसिंह हरि की स्तव वंदनादि करने लगे। ऋषिगण की वंदना से सन्तुष्ट होकर तब भगवान नृसिंहदेव ने कहा, ''हे ऋषिगण! वर माँगिए।'' ऋषिगण ने कहा,''हे भगवन्, यदि हमसब के प्रति आप प्रसन्न हों तो कृपा पूर्वक आप कदापि बदरीतीर्थ का त्याग मत करिए; हमसब की यही एकमात्र प्रार्थना है।'' तब श्रीहरि ने ''वह ही होगा'' कहकर ऋषियों की बात पर अंगीकार किया एवं तत्पश्चात् वे सब अपने-अपने आश्रम में चले गए। तब नृसिंह देव भी शिलारूप धारण करते हुए जलक्रीड़ारत हुए। जो मानव उपवास व्रत धारण कर जप-ध्यान परायण हो कर तीन दिन श्रीहरि के ध्यान में मग्न रहता है वह साक्षात् श्रीहरि के नृसिंह रूप का दर्शन कर अपने जीवन को धन्य करता है।

पुराकाल में सत्ययुग के प्रारम्भ में प्राणीगण के हितार्थ भगवान ने तपोयोग अवलम्बन पूर्वक एवं त्रेतायुग में ऋषिगण सह योगाभ्यास में एकनिष्ठ होकर एवं द्वापरयुग समागत होने से सुदुर्लभ ज्ञाननिष्ठ होकर बदरी विशाला में निवास किया था। परन्तु द्वापर युग में ही हठात् देवता एवं मुनिगणों के निकट भगवान अदृश्य हो गए! तब तप-प्रभाव से देव व ऋषिगण भगवत् गति से अविदित होकर विस्मयाकूल चित्त से ब्रह्मा के निकट प्रस्थान किया। तब ब्रह्मा ने विशाला में भगवान की अनुपस्थिति का विषय श्रवण कर ऋषिगण व देवगण को साथ में लेकर क्षीरनीर निधि के समीप गमन किया। वहाँ पहुँचकर ब्रह्मा जगन्नाथ

का स्तव करने लगे। ब्रह्मा के स्तव से हर्षित होकर श्रीहरि ने तब सागर-शयन से उठ कर कहा कि ब्रह्मा ही एकमात्र श्रीहरि के परब्रह्मरूप से विदित हैं, दूसरा कोई नहीं जान सकता। इसलिए ब्रह्मा ने तब हरि के स्वरूप को हृदय मध्य धारणा द्वारा प्रबोधित कर देव व ऋषिगण से कहा कि युग के प्रभाव हेतु मानवगण को शुभबुद्धिहीन और दुर्मेधा सम्पन्न देखकर श्रीहरि अन्तर्हित हो गए। यह श्रवण कर सब देवगण चले गये। तब लोक हितार्थ भगवान शंकर ने यतिरूप धारण कर हरि को नारदतीर्थ से लाकर विशाला में स्थापित किया। कलिकाल समागत देखकर श्रीहरि ने प्राय: समस्त तीर्थ परित्याग कर दिए थे, किन्तु शिव की तपस्या से विभू हरि इस बदरीक्षेत्र में सम्प्रति अवस्थान कर रहे हैं।

आदियुग से इस बदरीतीर्थ में अनेक ऋषि-मुनि, देवगण, सिद्धगण तपस्या करके पूर्णसिद्ध व आप्तकाम हुए हैं। प्रह्लाद जैसे प्रमुख भक्तगण ने इस हरि-क्षेत्र में तपस्या की थीं। बदरी-विशाला में कपाल-मोचन तीर्थ (जहाँ शिव ने ब्रह्महत्या से निष्कृतिप्राप्त की थी), ब्रह्मतीर्थ व ब्रह्मकुंड (जहाँ हयग्रीव भगवान आविर्भूत होकर वेदादि का पुनरुद्धार एवं पुन: प्रतिष्ठा की थी; यहाँ ज्ञानगंगा स्वरूपिणी सरस्वती नदी का आविर्भाव हुआ), इन्द्रतीर्थ, इन्द्रतीर्थ में मानसोद्भेद तीर्थ (जहाँ पर तप करने से वेदव्यास सदृश हुआ जा सकता है), मानसोद्भेद के पश्चिम में मनोहर वसुधारा तीर्थ (जहाँ नारद के उपदेशानुसार वसुगण तप करके सिद्ध हुए थें),पंचधारा तीर्थ (जहाँ प्रभास, पुष्कर, गया, नैमिषारण्य एवं कुरुक्षेत्र, ये द्रवरूप में परिणत होकर पंचधारा के रूप में पतित हुए); इस पंचधारा तीर्थ की पाँच निर्मल धाराएँ बद्रीनाथधाम में नित्य प्रतिष्ठित है। सोमकुंड तीर्थ (अत्रिपुत्र सोम के तपोस्थली) या सोमतीर्थ, द्वादशादित्य तीर्थ (कश्यप इस तीर्थ में तप करके दिवाकर हुए थे); यहाँ चतु:श्रोत तीर्थ है। (जहाँ धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष, ये वर्गचतुष्टय द्रवरूप में प्रवाहित है); सत्यपद तीर्थ या सत्यपद कुंड (जहाँ स्नान करने से सत्यलोक की प्राप्ति होती है), नरनारायणाश्रम, उर्वशी तीर्थ (जहाँ साक्षात् भगवान धर्म के औरस से मूर्ति के गर्भ में नर व नारायण रूप में जन्म लेकर विशाला पर्वत पर तपस्या करने के समय इन्द्र द्वारा तपस्या विनाशार्थ मदन को सगण प्रेरण करने पर तब अप्सरा उर्वशी को सृजन करके नर-नारायण वासव को अर्पण करने से इन्द्र तब सब कुछ विस्मृत हो कर निजालय चले गए); उर्वशी कुंड के ऊपरिभाग में भगवान का एक आमोदभवन विराजित है एवं दक्षिण में जगत्पति की आयुध निचय विद्यमान है। ब्रह्मकुंड के दक्षिण में नरावास नामक श्रेष्ठ शैल है एवं भगवान ने इस नरावास के सन्निधान में मेरुगिरि की स्थापना की। सिद्ध व महर्षि प्रभृतिगण इस मेरुश्र-ृंग में नारायण कर्तृक प्रतिपालित होकर विचरण करते हैं। भगवान नारायण हरि भी यहाँ नव रूप में विराजमान हैं। यहाँ श्रीहरि ने लोकपालगण को प्रतिष्ठित किया। इसी स्थल में एक क्रीड़ा-पुष्करिणी है। इसके अलावा बद्रीविशाल में मानसोद्भेद संगम के दक्षिण ओर धर्मक्षेत्र, इसके दक्षिण में उर्वशी संगम तीर्थ है। तत्पश्चात् कुर्मोद्धार तीर्थ; फिर ब्रह्मवर्त्त तीर्थ, जो ब्रह्मलोक प्रापक है। जोलोग एकमात्र भगवत् प्राप्ति के उद्देश्य से बद्रीनाथ तीर्थक्षेत्र पर तप रत रहते है, एकमात्र वे ही भगवान के परमपद को प्राप्त कर बद्रीविशाल के महिमा की उपलब्धि करने में सक्षम होते है।

अद्यावधि जिन समस्त ब्रह्मर्षि-महर्षि-सिद्धर्षिगणों ने सनातन धर्म रक्षार्थ, धर्मशास्त्र संरक्षणार्थ वेदव्यास के महामंडल के आसन को अलंकृत किया हैं वे सब ही व्यासदेव के तुल्य है। उन सब के मध्य वर्तमान में महामुनि महावतार बाबाजी महाराज (कैलाश बिहारी) अन्यतम एवं प्रधान हैं। *सहायक ग्रंथ : स्कन्द पुराण*

हिन्दी अनुवाद – मातृचरणाश्रिता श्रीमती ज्योति पारेख